The Eternal Epic of Divine Mother

दुर्गा सप्तशती

DURGA SAPTASHATI

Chapter 1: The Descent of Mahamaya & the Slaying of Madhu-Kaitabha

अध्याय १: महामाया का प्रादुर्भाव एवं मधुकैटभ वध

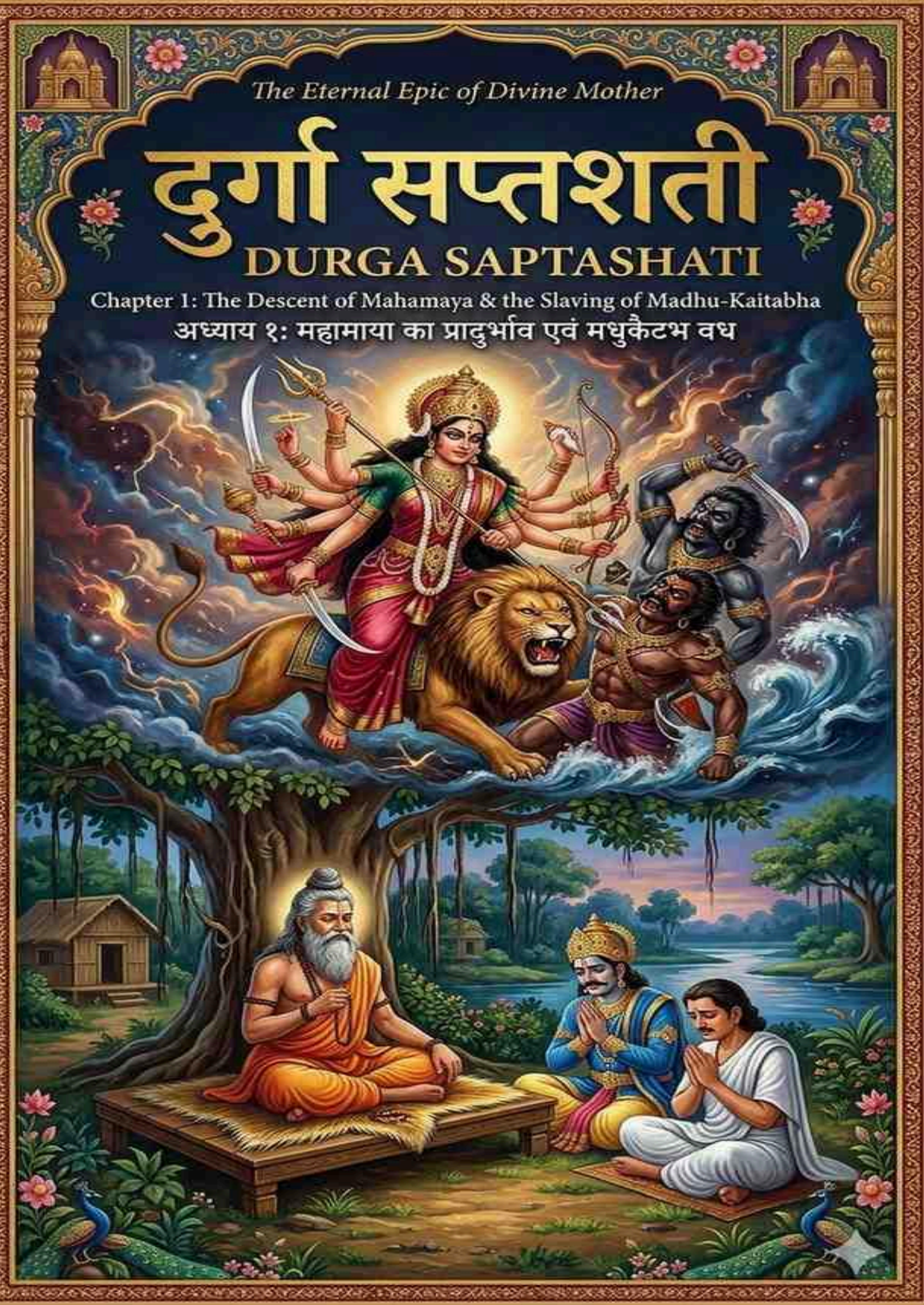

Durga Saptashati

|| 'प्रथम अध्याय' ||

—

Numerology By Nehaa

Connect on WhatsApp for Consultation: 8802673153

यह अंश 'दुर्गा सप्तशती' के प्रथम अध्याय 'मधु-कैटभ वध' का है।

सारांश:

मार्कण्डेय ऋषि, राजा सुरथ और वैश्य समाधि को भगवती महामाया के प्रभाव की कथा सुनाते हैं। वे बताते हैं कि किस प्रकार सूर्यपुत्र सावर्णि, महामाया के अनुग्रह से आठवें मनु बने।

कथा स्वारोचिष मन्वन्तर के राजा सुरथ से शुरू होती है, जिनका राज्य उनके शत्रुओं और दुष्ट मंत्रियों ने छीन लिया था। राज्य से वंचित सुरथ शिकार के बहाने जंगल में मेधा ऋषि के आश्रम में पहुँचते हैं। वहाँ उनकी भेंट समाधि नामक वैश्य से होती है, जिसे उसके स्वार्थी पुत्रों और पत्नी ने धन के लालच में घर से निकाल दिया था।

राजा और वैश्य, दोनों ही अपनी ममता और मोह के कारण दुखी थे, जबकि वे जानते थे कि जिनसे वे मोह कर रहे हैं, वे उनके शत्रु बन चुके हैं। वे अपनी इस मूढ़ता का कारण जानने के लिए मेधा ऋषि से पूछते हैं।

मेधा ऋषि बताते हैं कि यह सब जगदीश्वर भगवान विष्णु की योगनिद्रारूपा भगवती महामाया का प्रभाव है, जो ज्ञानियों के चित्त को भी बलपूर्वक खींचकर मोह में डाल देती हैं।

राजा के पूछने पर ऋषि महामाया के आविर्भाव और चरित्र का वर्णन करते हैं। वे कहते हैं कि कल्प के अंत में जब भगवान विष्णु योगनिद्रा में लीन थे, तब उनके कान के मैल से मधु और कैटभ नामक दो भयानक असुर उत्पन्न हुए। ये असुर ब्रह्माजी को मारने के लिए उद्यत हुए। ब्रह्माजी ने भगवान विष्णु को जगाने के लिए योगनिद्रा (महाकाली) की स्तुति की।

ब्रह्माजी की स्तुति से प्रसन्न होकर देवी योगनिद्रा भगवान विष्णु के नेत्र आदि स्थानों से निकलकर प्रकट हुईं। इससे भगवान विष्णु जागे और उन दोनों असुरों से पाँच हज़ार वर्षों तक बाहुयुद्ध किया। महामाया के मोह में होने के कारण, असुरों ने स्वयं ही भगवान विष्णु को वरदान माँगने को कहा। भगवान ने उनसे अपने हाथ से मारे जाने का वरदान माँगा। धोखे में आए असुरों ने जब सम्पूर्ण जगत् में जल ही जल देखा, तो कहा कि जहाँ पृथ्वी जल में डूबी न हो, वहीं उनका वध करें। तब भगवान विष्णु ने उनके मस्तक अपनी जाँघ पर रखकर चक्र से काट डाले।

इस प्रकार, ब्रह्माजी की स्तुति से महामाया स्वयं प्रकट हुईं और मधु-कैटभ का वध हुआ।

Durga Saptashati
|| 'प्रथम अध्याय' ||

Chapter :1

मेधा ऋषि का राजा सुरथ और समाधि को भगवती की महिमा बताते हुये मधु-कैटभ वध का प्रसङ्ग सुनाना

॥ विनियोग ॥

प्रथम चरित्र के ब्रह्मा ऋषि, महाकाली देवता, गायत्री छन्द, नन्दा शक्ति, रक्तदन्तिका बीज, अग्नि तत्व और ऋग्वेद स्वरूप है। श्री महाकाली देवता की प्रसन्नता के लिये प्रथम चरित्र के जप में विनियोग किया जाता है।

॥ ध्यान ॥

भगवान् विष्णु के सो जाने पर मधु और कैटभ को मारने के लिये कमलजन्मा ब्रह्माजी ने जिनका स्तवन किया था, उन महाकाली देवी का मैं सेवन करता हूँ। वे अपने दस हाथों में खड्ग, चक्र, गदा, बाण, धनुष, परिध, शूल, भुशुण्डि, मस्तक और शङ्ख धारण करती है। उनके तीन नेत्र हैं। वे समस्त अङ्गों में दिव्य आभूषणों से विभूषित हैं। उनके शरीर की कान्ति नीलमणि के समान है तथा वे दस मुख और दस पैरों से युक्त हैं।

ॐ चण्डिका देवी को नमस्कार है। मार्कण्डेय जी बोले : सूर्य के पुत्र सावर्णि जो आठवें मनु कहे जाते हैं, उनकी उत्पत्ति की कथा विस्तारपूर्वक कहता हूँ, सुनो, सूर्यकुमार महाभाग सावर्णि भगवती महामाया के अनुग्रह से जिस प्रकार मन्वन्तर के स्वामी हुये, वही प्रसङ्ग सुनाता हूँ |

पूर्वकाल की बात है, स्वारोचिष मन्वन्तर में सुरथ नाम के एक राजा थे, जो चैत्रवंश में उत्पन्न हुये थे। उनका समस्त भूमण्डल पर अधिकार था वे प्रजा का अपने औरस पुत्रों की भाँति धर्मपूर्वक पालन करते थे; तो भी उस समय कोलाविध्वंसी नाम के क्षत्रिय उनके शत्रु हो गये॥

राजा सुरथ की दण्डनीति बड़ी प्रबल थी। उनका शत्रुओं के साथ संग्राम हुआ। यद्यपि कोलाविध्वंसी संख्या में कम थे, तो भी राजा सुरथ युद्ध में उनसे परास्त हो गये| तब वे युद्ध भूमि से अपने नगर को लौट आये और केवल अपने देश के राजा होकर रहने लगे

(समूची पृथ्वी से अब उनका अधिकार जाता रहा), किन्तु वहाँ भी उन प्रबल शत्रुओं ने उस समय महाभागराजा सुरथ पर आक्रमण कर दिया |

राजा का बल क्षीण हो चला था; इसीलिये उनके दुष्ट, बलवान् एवं दुरात्मा मन्त्रिओ ने वहाँ उनकी राजधानी में भी राजकीय सेना और खजाने को हथिया लिया|

सुरथ का प्रभुत्व नष्ट हो चुका था, इसीलिये वे शिकार खेलने के बहाने घोड़े पर सवार हो वहाँ से अकेले ही एक घने जंगल में चले गये | वहाँ उन्होंने विप्रवर मेधा मुनि का आश्रम देखा, जहाँ कितने ही हिंसक जीव (अपनी स्वाभाविक हिंसावृति छोड़कर) परम शान्तभाव से रहते थे। मुनि के बहुत-से शिष्य उस वन की शोभा बढ़ा रहे थे॥

वहाँ जाने पर मुनि ने उनका सत्कार किया और वे उन मुनिश्रेष्ठ के आश्रम पर इधर-उधर विचरते हुये कुछ काल तक रहे॥

फिर ममता से आकृष्टचित्त होकर वहाँ इस प्रकार चिन्ता करने लगे- 'पूर्वकाल में मेरे पूर्वजों ने जिसका पालन किया था, वही नगर आज मुझसे रहित है। पता नहीं, मेरे दुराचारी भृत्यगण उसकी धर्मपूर्वक रक्षा करते हैं या नहीं। जो सदा मद की वर्षा करने वाला और शूरवीर था, वह मेरा प्रधान हाथी अब शत्रुओं के अधीन होकर न जाने किन भोगों को भोगता होगा? जो लोग मेरी कृपा, धन और भोजन पाने से सदा मेरे पीछे-पीछे चलते थे, वे निश्चय ही अब दूसरे राजाओं का अनुसरण करते होंगे।

उन अपव्ययी लोगों के द्वारा सदा खर्च होते रहने के कारण अत्यन्त कष्ट से जमा किया हुआ मेरा वह खजाना खाली हो जायेगा।' ये तथा और भी कई बातें राजा सुरथ निरन्तर सोचते रहते थे।

एक दिन उन्होंने वहाँ विप्रवर मेधा के आश्रम के निकट एक वैश्य को देखा और उससे पूछा- 'भाई! तुम कौन हो? यहाँ तुम्हारे आने का क्या कारण है? तुम क्यों शोक ग्रस्त और अनमने से दिखायी देते हो?' राजा सुरथ का यह प्रेमपूर्वक कहा हुआ वचन सुनकर वैश्य ने विनीत भाव से उन्हें प्रणाम करके कहा॥

वैश्य बोला - राजन्! मैं धनियों के कुल में उत्पन्न एक वैश्य हूँ। मेरा नाम समाधि है॥ मेरे दुष्ट स्त्री-पुत्रों ने धन के लोभ से मुझे घर से बाहर निकाल दिया है। मैं इस समय धन, स्त्री और पुत्रों से वञ्चित हूँ। मेरे विश्वसनीय बन्धुओ ने मेरा ही धन लेकर मुझे दूर कर दिया है, इसीलिये दुःखी होकर मैं वन में चला आया हूँ। यहाँ रहकर मैं इस बात को नहीं जानता कि मेरे पुत्रों की, स्त्री की और स्वजनों की कुशल है या नहीं। इस समय घर में वे कुशल से

रहते हैं अथवा उन्हें कोई कष्ट है? ॥ वे मेरे पुत्र कैसे है? क्या वे सदाचारी हैं अथवा दुराचारी हो गये हैं?

राजा ने पूछा -॥ जिन लोभी स्त्री-पुत्र आदि ने धन के कारण तुम्हें घर से निकाल दिया, उनके प्रति चित्त में इतना स्नेह का बन्धन क्यों है॥

वैश्य बोला -॥ आप मेरे विषय में जैसी बात कहते हैं, वह सब ठीक है॥

किन्तु क्या करूँ, मेरा मन निष्ठुरता नहीं धारण करता। जिन्होंने धन के लोभ में पड़कर पिता के प्रति स्नेह, पति के प्रति प्रेम तथा आत्मीयजन के प्रति अनुराग को तिलाञ्जलि दे मुझे घर से निकाल दिया है, उन्हीं के प्रति मेरे हृदय में इतना स्नेह है। महामते! गुणहीन बन्धुओं के प्रति भी जो मेरा चित्त इस प्रकार प्रेम मग्न हो रहा है, यह क्या है - इस बात को मैं जानकर भी नहीं जान पाता। उनके लिये मैं लंबी साँसे ले रहा हूँ और मेरा हृदय अत्यन्त दुःखित हो रहा है॥

उन लोगों में प्रेम का सर्वथा अभाव है; तो भी उनके प्रति जो मेरा मन निष्ठुर नही हो पाता, इसके लिये क्या करूँ?॥

मार्कण्डेय जी कहते हैं -॥ ब्रह्मन्! तदनन्तर राजाओं में श्रेष्ठ सुरथ और वह समाधि नामक वैश्य दोनों साथ-साथ मेधा मुनिकी सेवा में उपस्थित हुये और उनके साथ यथायोग्य न्यायानुकूल विनयपूर्ण बर्ताव करके बैठे। तत्पश्चात् वैश्य और राजा ने कुछ वार्तालाप आरम्भ किया॥

राजा ने कहा -॥ भगवन्! मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ, उसे बताइये॥ मेरा चित्त अपने अधीन न होने के कारण वह बात मेरे मन को बहुत दुःख देती है। जो राज्य मेरे हाथ से चला गया है, उसमें और उसके सम्पूर्ण अङ्गों में मेरी ममता बनी हुई है॥

मुनिश्रेष्ठ! यह जानते हुये भी कि वह मेरा नहीं है, अज्ञानी की भाँति मुझे उसके लिये दुःख होता है; यह क्या है? इधर यह वैश्य भी घर से अपमानित होकर आया है। इसके पुत्र,स्त्री और भृत्यों ने इसे छोड़ दिया है॥ स्वजनों ने भी इसका परित्याग कर दिया है, तो भी यह उनके प्रति अत्यन्त हार्दिक स्नेह रखता है। इस प्रकार यह तथा मैं दोनों ही बहुत दुःखी हैं॥ जिसमें प्रत्यक्ष दोष देखा गया है, उस विषय के लिये भी हमारे मन में ममता जनित आकर्षण पैदा हो रहा है।

महाभाग! हम दोनों समझदार हैं; तो भी हम में जो मोह पैदा हुआ है, यह क्या है? विवेक शून्य पुरुष की भाँति मुझमें और इसमें भी यह मूढ़ता प्रत्यक्ष दिखायी देती है॥

ऋषि बोले -॥ महाभाग! विषयमार्ग का ज्ञान सब जीवों को है॥ इसी प्रकार विषय भी सबके लिये अलग-अलग हैं, कुछ प्राणी दिन में नहीं देखते और दूसरे रात में ही नहीं देखते॥ तथा कुछ जीव ऐसे हैं, जो दिन और रात्रि में भी बराबर ही देखते हैं। यह ठीक है कि मनुष्य समझदार होते हैं; किन्तु केवल वे ही ऐसे नहीं होते॥ पशु, पक्षी और मृग आदि सभी प्राणी समझदार होते हैं। मनुष्यों की समझ भी वैसी ही होती है, जैसी उन मृग और पक्षियों की होती है॥

तथा जैसी मनुष्यों की होती है, वैसी ही उन मृग-पक्षी आदि की होती है। यह तथा अन्य बातें भी प्रायः दोनों में समान ही हैं। समझ होने पर भी इन पक्षियों को तो देखो, ये स्वयं भूख से पीड़ित होते हुये भी मोहवश बच्चों की चोंच में कितने चाव से अन्न के दाने डाल रहे हैं।

नरश्रेष्ठ! क्या तुम नहीं देखते कि ये मनुष्य समझदार होते हुये भी लोभ वश अपने किये हुये उपकार का बदला पाने के लिये पुत्रों की अभिलाषा करते हैं? यद्यपि उन सबमें समझ की कमी नहीं है, तथापि वे संसार की स्थिति (जन्म-मरण की परम्परा) बनाये रखने वाले भगवती महामाया के प्रभाव द्वारा ममतामय भँवर से युक्त मोह के गर्त में गिराये गये हैं। इसीलिये इसमें आश्चर्य नहीं करना चाहिये।

जगदीश्वर भगवान विष्णु की योगनिद्रारूपा जो भगवती महामाया हैं, उन्हीं से यह जगत मोहित हो रहा है। वे भगवती महामाया देवी ज्ञानियों के भी चित्त को बलपूर्वक खींचकर मोह में डाल देती है। वे ही इस सम्पूर्ण चराचर जगत की सृष्टि करती हैं तथा वे ही प्रसन्न होने पर मनुष्यों को मुक्ति के लिये वरदान देती हैं। वे ही परा विद्या संसार-बन्धन और मोक्ष की हेतुभूता सनातनी देवी तथा सम्पूर्ण ईश्वरों की भी अधीश्वरी हैं॥

राजा ने पूछा -॥ भगवन्! जिन्हें आप महामाया कहते हैं, वे देवी कौन हैं? ब्रह्मन्! उनका आविर्भाव कैसे हुआ? तथा उनके चरित्र कौन-कौन हैं? ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ महर्षे! उन देवी का जैसा प्रभाव हो, जैसा स्वरूप हो और जिस प्रकार प्रादुर्भाव हुआ हो, वह सब मैं आपके मुख से सुनना चाहता हूँ॥

ऋषि बोले -॥ राजन्! वास्तव में तो वे देवी नित्यस्वरूपा ही हैं। सम्पूर्ण जगत् उन्हीं का रूप है तथा उन्होंने समस्त विश्व को व्याप्त कर रखा है, तथापि उनका प्राकट्य अनेक प्रकार से होता है। वह मुझसे सुनो। यद्यपि वे नित्य और अजन्मा हैं, तथापि जब देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये प्रकट होती हैं, उस समय लोक में उत्पन्न हुई कहलाती हैं।

कल्प के अन्त में जब सम्पूर्ण जगत् एकार्णव में निमग्न हो रहा था और सबके प्रभु भगवान् विष्णु शेषनाग की शय्या बिछाकर योगनिद्रा का आश्रय ले सो रहे थे, उस समय

उनके कानों के मैल से दो भयङ्कर असुर उत्पन्न हुये, जो मधु और कैटभ के नाम से विख्यात थे। वे दोनों ब्रह्माजी का वध करने को तैयार हो गये। भगवान् विष्णु के नाभिकमल में विराजमान प्रजापति ब्रह्माजी ने जब उन दोनों भयानक असुरों को अपने पास आया और भगवान् को सोया हुआ देखा, तब एकाग्रचित्त होकर उन्होंने भगवान् विष्णु को जगाने के लिये उनके नेत्रों में निवास करने वाली योगनिद्रा का स्तवन आरम्भ किया।

जो इस विश्व की अधीश्वरी, जगत् को धारण करने वाली, संसार का पालन और संहार करने वाली तथा तेजःस्वरूप भगवान् विष्णु की अनुपम शक्ति हैं, उन्हीं भगवती निद्रा देवी की भगवान् ब्रह्मा स्तुति करने लगे॥

ब्रह्माजी ने कहा -॥ देवि! तुम्हीं स्वाहा, तुम्हीं स्वधा और तुम्हीं वषट्कार हो। स्वर भी तुम्हारे ही स्वरूप हैं।तुम्हीं जीवन दायिनी सुधा हो। नित्य अक्षर प्रणव में अकार, उकार, मकार - इन तीन मात्राओं के रूप में तुम्हीं स्थित हो तथा इन तीन मात्राओं के अतिरिक्त जो बिन्दुरूपा नित्य अर्धमात्रा है, जिसका विशेष रूप से उच्चारण नहीं किया जा सकता, वह भी तुम्हीं हो।

देवि! तुम्हीं सन्ध्या, सावित्री तथा परम जननी हो। देवि! तुम्हीं इस विश्व-ब्रह्माण्ड को धारण करती हो। तुमसे ही इस जगत् की सृष्टि होती है तुम्हीं से इसका पालन होता है और सदा तुम्हीं कल्प के अन्त में सबको अपना ग्रास बना लेती हो।

जगन्मयी देवि! इस जगत् की उत्पत्ति के समय तुम सृष्टिरूपा हो, पालन-काल में स्थिति रूपा हो तथा कल्पान्त के समय संहार रूप धारण करने वाली हो। महामोह रूपा, महादेवी और महासुरी हो। तुम्हीं तीनों गुणों को उत्पन्न करने वाली सबकी प्रकृति हो। भयङ्कर कालरात्रि, महारात्रि और मोहरात्रि भी तुम्हीं हो। तुम्हीं श्री, तुम्हीं ईश्वरी, तुम्हीं ह्री और तुम्हीं बोध स्वरूपा बुद्धि हो।

लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति और क्षमा भी तुम्हीं हो। तुम खड्गधारिणी, शूलधारिणी, घोररूपा तथा गदा, चक्र, शङ्ख और धनुष धारण करने वाली हो। बाण, भुशुण्डी और परिघ- ये भी तुम्हारे अस्त्र हैं। तुम सौम्य और सौम्यतर हो- इतना ही नहीं जितने भी सौम्य एवं सुन्दर पदार्थ हैं, उन सबकी अपेक्षा तुम अत्यधिक सुन्दरी हो। पर और अपर- सबसे परे रहने वाली परमेश्वरी, तुम्हीं हो। सर्वस्वरूपे देवि! कहीं भी सत्-असत् रूप जो कुछ वस्तुएँ हैं और उन सबकी जो शक्ति है, वह तुम्हीं हो। ऐसी अवस्था में तुम्हारी स्तुति क्या

हो सकती है?

जो इस जगत् की सृष्टि, पालन और संहार करते हैं, उन भगवान् को भी जब तुमने निद्रा के अधीन कर दिया है, तब तुम्हारी स्तुति करने में यहाँ कौन समर्थ हो सकता है?

मुझ को भगवान् शङ्कर को तथा भगवान् विष्णु को भी तुमने ही शरीर धारण कराया है; अतः तुम्हारी स्तुति करने की शक्ति किसमें है?

देवि! तुम तो अपने इन उदार प्रभावों से ही प्रशंसित हो ये जो दोनों दुर्धर्ष असुर मधु और कैटभ हैं, इनको मोह में डाल दो और जगदीश्वर भगवान् विष्णु को शीघ्र ही जगा दो। साथ ही इनके भीतर इन दोनों महान् असुरों को मार डालने की बुद्धि उत्पन्न कर दो॥

ऋषि कहते हैं -॥ राजन्! जब ब्रह्माजी ने वहाँ मधु और कैटभ को मारने के उद्देश्य से भगवान् विष्णु को जगाने के लिये तमोगुण की अधिष्ठात्री देवी योगनिद्रा की इस प्रकार स्तुति की, तब वे भगवान् के नेत्र, मुख, नासिका, बाहु, हृदय और वक्षःस्थल से निकलकर अव्यक्तजन्मा ब्रह्माजी की दृष्टि के समक्ष खड़ी हो गयीं।

योगनिद्रा से मुक्त होने परजगत् के स्वामी भगवान् जनार्दन उस एकार्णव के जल में शेषनाग की शय्यासे जाग उठे। फिर उन्होंने उन दोनों असुरों को देखा। वे दुरात्मा मधु और कैटभ अत्यन्त बलवान् तथा पराक्रमी थे और क्रोध से लाल आँखें किये ब्रह्माजी को खा जाने के लिये उद्योग कर रहे थे। तब भगवान् श्रीहरि ने उठकर उन दोनों के साथ पाँच हजार वर्षों तक केवल बाहुयुद्ध किया। वे दोनों भी अत्यन्त बल के कारण उन्मत्त हो रहे थे।

इधर महामाया ने भी उन्हें मोह में डाल रखा था; इसीलिये वे भगवान् विष्णु से कहने लगे- "हम तुम्हारी वीरता से सन्तुष्ट हैं। तुम हम लोगों से कोई वर माँगों"॥

श्रीभगवान् बोले -॥ यदि तुम दोनों मुझ पर प्रसन्न हो तो अब मेरे हाथ से मारे जाओ। बस, इतना-सा ही मैंने वर माँगा है। यहाँ दूसरे किसी वर से क्या लेना है॥

ऋषि कहते हैं -॥ इस प्रकार धोखे में आ जाने पर जब उन्होंने सम्पूर्ण जगत् में जल-ही-जल देखा, तब कमलनयन भगवान् से कहा- 'जहाँ पृथ्वी जल में डूबी हुयी न हो- जहाँ सूखा स्थान हो, वहीं हमारा वध करो'॥

ऋषि कहते हैं - तब 'तथास्तु' कहकर शङ्ख, चक्र और गदा धारण करने वाले भगवान् ने उन दोनों के मस्तक अपनी जाँघ पर रखकर चक्र से काट डाले। इस प्रकार ये देवी

महामाया ब्रह्माजी की सतुति करने पर स्वयं प्रकट हुयी थीं। अब पुनः तुमसे उनके प्रभाव का वर्णन करता हूँ, सुनो |

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेय पुराण में सावर्णिक मन्वन्तर की कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में 'मधु-कैटभ वध' नामक पहला अध्याय पूरा हुआ। ॥

Durga Saptashati

|| 'Chapter One' ||

Chapter :1

The narrative of Rishi Medha recounting the glory of the Goddess and the slaying of Madhu and Kaitabha to King Suratha and Samadhi.

॥ **Viniyoga (Application)** ॥

For the first character (story), Brahma is the Rishi, Mahakali is the deity, Gayatri is the meter (chhanda), Nanda is the shakti (power), Raktadantika is the Bija (seed mantra), Agni is the tattva (element), and Rigveda is the form. The Viniyoga is used in the chanting of the first character for the pleasure of Shri Mahakali Devi.

॥ **Dhyana (Meditation)** ॥

I worship that Mahakali Devi, who was praised by Brahma, born from the lotus, in order to slay Madhu and Kaitabha when Lord Vishnu was asleep. She holds a sword, disc, mace, arrow, bow, Parigha, spear, Bhushundi, a severed head, and a conch in her ten hands. She has three eyes. She is adorned with divine ornaments on all her limbs. The glow of her body is like a blue jewel, and she has ten faces and ten feet.

Om, Salutations to Chandika Devi. Markandeya said: Listen, I will recount in detail the story of the origin of Savarni, the son of Surya, who is called the eighth Manu. I narrate the same narrative of how the great-souled Savarni, the son of Surya, became the lord of the Manvantara (era of Manu) by the grace of Goddess Mahamaya.

In ancient times, during the Swarochisha Manvantara, there was a king named Suratha, who was born in the Chaitra dynasty. He held authority over the entire earth. He ruled his subjects righteously, like his own legitimate sons; yet, at that time, Kshatriyas named

Kolavidhwamsi became his enemies.

King Suratha's system of justice (Dandaniti) was very strong. A battle ensued with his enemies. Although the Kolavidhwamsi were few in number, King Suratha was defeated by them in battle. Then he returned from the battlefield to his city and remained only the king of his own country (his authority over the entire earth was now lost), but even there, those powerful enemies attacked the great-souled King Suratha at that time.
The king's power had waned; therefore, his wicked, powerful, and evil-minded ministers seized his royal army and treasury, even in his capital.

Surath's authority was destroyed, so he rode alone on horseback, pretending to hunt, and went to a dense forest. There, he saw the hermitage of the excellent sage Medha, where many carnivorous creatures lived in perfect tranquility (abandoning their natural violent instincts). Many disciples of the sage enhanced the beauty of that forest.

Upon arriving, the sage welcomed him, and the king stayed for some time, wandering around the hermitage of that best of sages.

Then, with a mind drawn by attachment, he began to worry there, thinking: 'The city that my ancestors ruled in the past is now without me. I wonder whether my wicked servants are protecting it righteously or not. My chief elephant, who always brought forth exhilaration and was valiant, is now under the control of enemies; I wonder what pleasures he is enjoying? Those who always followed me because of my favor, wealth, and food, must surely be following other kings now.

That treasury of mine, accumulated with great difficulty, will be emptied because of the constant expenditure by those extravagant people.' King Surath continued to ponder these and many other things.

One day, near the hermitage of the excellent sage Medha, he saw a Vaishya (merchant) and asked him, 'Brother! Who are you? What is the reason for your coming here? Why do you look so grief-stricken and absent-minded?' Hearing these loving words from King Surath, the Vaishya humbly bowed to him and said:

The Vaishya said, 'O King! I am a Vaishya born in a wealthy family. My name is Samadhi. My wicked wife and sons have driven me out of the house due to greed for wealth. I am presently deprived of wealth, wife, and sons. My trustworthy relatives took my wealth and distanced me, which is why I came to the forest in distress. Staying here, I do not know whether my sons, wife, and relatives are well or not. Are they living peacefully at home now, or are they facing some difficulty? What are my sons like? Are they virtuous or have they become wicked?'

The King asked, 'Why is there such a bond of affection in your heart for those greedy wife and sons who drove you out of the house for the sake of wealth?'

The Vaisya said: "All that you say about me is right. But what can I do, my mind does not become cruel. Those who, out of greed for wealth, abandoned love for their father, affection for their husband, and attachment to their relatives, and drove me out of the house, I still have so much affection for them in my heart. O great sage! What is this—that my mind is so engrossed in love for these unworthy relatives? I know this, yet I cannot understand it. I sigh deeply for them, and my heart is extremely distressed. They are completely devoid of love; yet, what can I do so that my mind does not become cruel towards them?"

Markandeya Ji said: "O Brahman! After that, Surath, the best among kings, and that Vaisya named Samadhi, both came together to serve the sage Medha. They behaved respectfully and appropriately according to the norms and sat down. Thereafter, the Vaisya and the King started a conversation."

The King said: "O Lord! I want to ask you one thing, please tell me. That matter causes great distress to my mind because my heart is not under my control. I still have attachment for the kingdom that has gone out of my hands, and for all its parts. O best of sages! Even though I know it is not mine, I grieve for it like an ignorant person; what is this? This Vaisya, too, has come after being insulted at home. His sons, wife, and servants have abandoned him. His own people have also forsaken him, yet he holds deep heartfelt affection for them. Thus, both he and I are very miserable. Even for the things where a defect is clearly seen, a bond of attachment is being created in our minds. O noble one! We are both wise; then what is this delusion that has arisen in us? This foolishness is clearly visible in me and in him, like in a person devoid of discernment."

The Rishi said: "O noble one! All living beings have knowledge of the sense-objects. Similarly, the sense-objects are also different for everyone; some creatures do not see in the day, and others do not see at night. And some creatures are such that they see equally well both day and night.

It is true that humans are discerning, but they are not the only ones. Animals, birds, and deer, all creatures are discerning. The understanding of humans is similar to that of those deer and birds. And the understanding of those deer and birds is similar to that of humans. This and other matters are mostly similar in both. Despite having understanding, look at these birds: although they themselves are afflicted by hunger, they lovingly put grains of food into the beaks of their young out of delusion."

O best among men! Do you not see that even though these humans are wise, out of greed, they desire sons in order to receive recompense for the good deeds they have done? Although there is no lack of understanding in all of them, they have been thrown into the pit of delusion, filled with the whirlpool of attachment, by the influence of Goddess Mahamaya, who maintains the cycle of the

world (the tradition of birth and death). Therefore, there is no need to be surprised by this.

This world is being enchanted by Goddess Mahamaya, who is the form of the Yoga-nidra (sleep of union) of Lord Vishnu, the Lord of the Universe. That Goddess Mahamaya forcefully draws the minds of even the wise and plunges them into delusion. She alone creates this entire moving and unmoving world, and when pleased, she grants the boon of liberation to human beings. She is the Supreme Knowledge, the eternal Goddess, who is the cause of both the bondage of the world and liberation, and she is also the sovereign of all the gods.

The King asked -॥ O Venerable Sir! Who is that Goddess whom you call Mahamaya? O Brahman! How did she manifest? And what are her deeds? O best among the knowers of Brahman, great sage! I wish to hear from your mouth all about the influence of that Goddess, her form, and the manner in which she appeared.

The Sage replied -॥ O King! In reality, that Goddess is eternal by nature. The entire world is her form, and she pervades the whole universe, yet her manifestation occurs in various ways. Listen to me. Although she is eternal and unborn, when she appears to accomplish the work of the gods, she is spoken of in the world as having been born.

At the end of the *Kalpa* (aeon), when the entire world was submerged in a single ocean and Lord Vishnu, the master of all, was resting on the bed of Sheshanaga, having taken shelter in Yoga-nidra, two terrifying *Asuras* (demons) named Madhu and Kaitabha were born from the dirt of his ears. Those two prepared to kill Brahmaji. Prajapati Brahmaji, seated on the navel-lotus of Lord Vishnu, saw those two terrifying *Asuras* approaching and saw the Lord asleep. Then, with a focused mind, he began to praise Yoga-nidra, who resides in the eyes of Lord Vishnu, to awaken Him.

Lord Brahma began to praise that Goddess of sleep, who is the

sovereign of this universe, the support of the world, the protector and destroyer of the world, and the unparalleled power of the effulgent Lord Vishnu.

Brahmaji said - ॥ O Goddess! You are Svaha, you are Svadha, and you are Vashatkar. The musical notes (*svar*) are also your form. You are the life-giving nectar (Sudha). In the eternal syllable *Pranava* (Om), you are situated in the form of the three *Matras* (measures) - A-kara, U-kara, and Ma-kara. And the eternal half-measure (*ardhamatra*) in the form of a dot (*bindu*), which cannot be distinctly pronounced, is also you.

Devi! You are Sandhya, Savitri, and the supreme Mother. Devi! You sustain this universe. The creation of this world proceeds from you; by you is it maintained, and in the end of the kalpa, you always devour all.

O Goddess, the soul of the universe! At the time of the creation of this world, you are the form of creation (Srishtirupa), during the time of maintenance, you are the form of preservation (Sthiti Rupa), and at the time of the end of the kalpa, you take the form of destruction (Samhara Rupa). You are Mahamoharupa (the form of great delusion), Mahadevi, and Mahasuri. You are the original Prakriti (Nature) that gives rise to the three Gunas (Sattva, Rajas, Tamas) in everyone.

You are also the fearsome Kalaratri (Night of Destruction), Maharatri (Great Night), and Moharatri (Night of Delusion). You are Shri (Prosperity), you are Ishwari (Ruler), you are Hri (Modesty/Shame), and you are Buddhi (Intellect) in the form of knowledge.

You are also Lajjā (Modesty), Pushti (Nourishment), Tushti (Contentment), Shānti (Peace), and Kshamā (Forgiveness). You are the one who bears the sword (Khadgadharini), the trident (Shuladharini), the terrible form (Ghorarupa), and the one who holds the mace (Gada), discus (Chakra), conch (Shankha), and

bow (Dhanush). The arrow (Bāna), Bhushundi (a kind of firearm/weapon), and Parigha (iron club) – these are also your weapons. You are gentle (Saumya) and even gentler (Saumyatar) – not only this, but you are exceedingly beautiful compared to all gentle and beautiful objects. You are the supreme Goddess (Parameshwari) who resides beyond the superior (Para) and the inferior (Apara). O Goddess, the form of all! Whatever things exist here in the form of Sat (existent) and Asat (non-existent), and the power of all those things—that is you. In such a state, what praise can be offered to you?

When you have placed even those Gods who create, maintain, and destroy this world under the control of sleep, then who here can be capable of praising you?

You have made me, Lord Shankara, and Lord Vishnu also take a body; therefore, who has the power to praise you?

O Devi! You are praised merely by these generous influences of yours. May you cast these two formidable Asuras, Madhu and Kaitabha, into delusion, and quickly awaken Lord Vishnu, the Lord of the universe. At the same time, generate within him the intellect to slay these two great Asuras."

The Rishi said: "O King! When Brahmaji thus praised Yogānidrā, the presiding Goddess of the Tamas Guna, with the intention of slaying Madhu and Kaitabha, in order to awaken Lord Vishnu, she emerged from the eyes, mouth, nose, arms, heart, and chest of the Lord and stood before Brahmaji, who is unmanifest in birth.

Upon being released by Yogānidrā, Lord Janārdana, the Master of the world, awoke from His bed on Sheshanāga in the waters of that single ocean (ekārṇava). Then He saw those two Asuras.

Those wicked souls, Madhu and Kaitabha, were extremely strong and valorous, and with eyes red with anger, they were attempting to devour Brahmaji. Then Lord Shri Hari arose and engaged in a

bare-handed fight with them for five thousand years. Both of them were also intoxicated by their immense strength.

Meanwhile, Mahamaya had also put them under a spell of delusion, which is why they started saying to Lord Vishnu, "We are pleased with your valor. Ask us for any boon."

The Lord said, "If you both are pleased with me, then now be slain by my hand. That is the only boon I have asked for. What need is there for any other boon here?"

The Sage said, "Thus, having been deceived, when they saw only water everywhere in the entire world, they said to the lotus-eyed Lord, 'Slay us in a place where the Earth is not submerged in water – where there is dry ground.'"

The Sage said, "Then, saying 'So be it,' the Lord, who holds the conch, discus, and mace, placed their heads on his thigh and cut them off with the discus. Thus, this Goddess Mahamaya had manifested herself upon the praise of Brahmaji. Now, I shall again describe her glory to you, listen."

Thus concludes the first chapter named 'The Slaying of Madhu and Kaitabha' in the Devi Mahatmya, which is a part of the story of the Savarnika Manvantara in the Shrimarkandeya Purana. ॥

Numerology By Nehaa

Connect on WhatsApp for Consultation: 8802673153

Our Services

- Name Correction
- Lo Shu Grid reading
- Missing Number Remedies
- Business Name Correction
- Baby Name Correction
- Kundali Matching
- Lucky Mobile Number
- Lucky House Number
- Lucky Vehicle Number
- Home Vastu
- Office Vastu

Free Numerology Tools

- Numerology Name Calculator
- Lo Shu Grid Calculator
- Lucky Mobile Number Calculator
- Lucky Vehicle Number Calculator
- Numerology Kundali Matching Tool